विराट वट

कितने ही जीवों के हे वट,
संतत आश्रय दाता।
अगणित पांथों के आतप से,
सदा रहे हो त्राता।
विविध विहगगण की वंशावलि,
अननुमेय लम्बी है।
हर प्राणी समोद रहता है,
जो तव अवलम्बी है।। 1।।

उन्नत भाल लिए नभ प्रतिमुख,
गर्वित खड़े हुए हो।
अगणित झंझावातों को सह,
अविचल अड़े हुए हो।
बार बार जोड़ते मही से,
तुम चिरपरिचित नाता।
मानों बालक दौड़ दौड़कर,
जननि क्रोड़ में आता ।। 2।।

जनक कोप वचनोपम धरते,
तुम रविकर निज शिर पर।
धरते हो सम भाव मेघ भी,
जब आते हैं घिरकर।
तव पत्रावलि की हरीतिमा,
करती दृग शीतल है।
प्राण वायु के स्त्रोत चिरंतन,
उपकृत जगतीतल है।। 3 ।।

सिद्ध हुए कितने ही खोजी,
लेकर वट तव आश्रय।
प्रकट हुआ सत्यार्थ जगत का,
क्षीण हुए सब संशय।
परम शान्ति उतरी कितनों के,
पूर्व व्यग्र अति मन में।
जो आए थे तत्व खोजने,
सब कुछ तज कर वन में ।। 4 ।।

अति दुर्लभ बुद्धत्व प्राप्ति के,
साक्षी तुम एकाकी।
मार पराजय के दृष्टा तुम,
माया मिटी वराकी।
जन मानस शीतलता दायक,
को दी तुमने छाया।
अग होकर भी चर से बढ़कर,
तुमने धर्म निभाया।। 5।।

सूक्ष्म विराट यहाँ हो सकता,
करते निज दिग्दर्शन ।
नहीं जटाधरता विरोधिनी,
रस की यह तव दर्शन ।
वसुधा क्षीर प्रवाह युक्त दृढ़,
विकसित देह तुम्हारी ।
क्षमाशील उपजीव्य जीव के,
तुम गुरूता अधिकारी ।। 6 ।।

किन्तु नवल आरोप लगाते,
तुम पर भी नव मानव ।
जगा रहे तव विमुख लोक में,
सबल द्वेष का दानव ।
होने देते नहीं प्रवर्धित,
नवतरू को छाया में ।
बाधित अन्य विकास भर रहे,
पोषक निज काया में ।। 7 ।।

अब छाया लग रही लोक को,
निज उन्नति में बाधक ।
छाया हीन तुंगता का है,
मानव पटु आराधक ।
नहीं अडिगता श्लाघ्य रही अब,
त्याग न बहु आश्रयता ।
भीति जनन अब न्याय्य,
न देना प्राणी को निर्भयता ।। 8 ।।

किन्तु अंजसा मुझे विदित है,
प्रकृति न तुम बदलोगे।
बढ़कर आतप पुनः शीर्ष पर,
हे विराट वट लोगे।
शाख भुजा संकोच न तुमसे,
हो पाएगा प्रियवर।
यद्यपि है स्वजाति का नवतरू,
प्रिय तुमको खग वानर।। 9 ।।

दिनांक 09;06;2014

शिव कुमार मिश्र